ISSN: 2395-7852

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

Volume 10, Issue 3, May-June 2024

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

IMPACT FACTOR: 7.583

| www.ijarasem.com | ijarasem@gmail.com | +91-9940572462 |

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 7.583 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 11, Issue 3, May-June 2024 |

भारत में राजनीति के बदलते आयाम

DR. OM PRAKASH SHARMA

POLITICAL SCIENCE, VIDHYA SAMBAL GUEST FACULTY, GOVT. COLLEGE, TALERA, DISTRICT-BUNDI, RAJASTHAN, INDIA

सार

जर्नल ऑफ डेमोक्रेसी 13.1 (2002) 52-66 परंपरागत ज्ञान यह है कि भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है, लेकिन बहुत कम लोगों ने माना है कि यह बाधाओं के बावजूद ऐसा है। भारतीय अनुभव व्यापक रूप से प्रचलित दृष्टिकोण के विपरीत है कि अमीर समाजों के गरीब समाजों की तुलना में लोकतांत्रिक होने की संभावना अधिक होती है, और यह कि बड़ी अल्पसंख्यक आबादी वाले समाज जातीय सफाई और गृहयुद्ध के लिए प्रवण होते हैं। भारत, एक गरीब और कुख्यात विविधता वाला देश, बीसवीं सदी के आधे से अधिक समय तक सफल रहा है और ऐसा लगता है कि इक्कीसवीं सदी में भी सफल होगा। भारत का लोकतंत्र ठोस और टिकाऊ साबित हुआ है। संयुक्त राज्य अमेरिका की तुलना में चुनावी भागीदारी अधिक रही है, चुनाव स्वतंत्र और निष्पक्ष रहे हैं, केंद्र और राज्यों में सरकारें बदलती रही हैं, और स्वतंत्र भाषण और संघ संवैधानिक रूप से संरक्षित हैं और व्यापक रूप से उनका पालन किया जाता है। लेकिन लोकतंत्र चुनौती और परिवर्तन के अधीन है। यह निबंध इस बात की जांच करता है कि 1990 के दशक के दौरान भारत में लोकतंत्र ने विभिन्न चुनौतियों का जवाब क्यों और कैसे दिया। इन्हें सात शीर्षकों के अंतर्गत संक्षेपित किया जा सकता है: 1) भारत की राजनीतिक व्यवस्था में संघीय राज्यों की अधिक प्रमुख भूमिका। ब्रिटेन से भारत की स्वतंत्रता के बाद से आधी सदी में राज्य राजनीतिक और आर्थिक रूप से अपनी बात पहले से कहीं अधिक कह रहे हैं। 2) पार्टी प्रणाली का परिवर्तन। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रभुत्व का युग समाप्त हो गया है। कांग्रेस एक प्रमुख पार्टी बनी हुई है, लेकिन अब इसे बहुदलीय प्रणाली के भीतर काम करना होगा जिसमें न केवल राष्ट्रीय स्तर पर प्रभावशाली भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) शामिल है, बल्कि कई महत्वपूर्ण क्षेत्रीय और राज्य-आधारित दल भी शामिल हैं। 3) गठबंधन सरकार। संसदीय बहुमत पर आधारित स्थिर केंद्रीय सरकारों ने गठबंधन सरकारों को रास्ता दिया है, जिन्हें क्षेत्रीय दलों के समूह पर निर्भर रहना पड़ता है। इस मामले में भारत इटली या इजरायल जैसा बन गया है, दोनों ही जगहें जहाँ छोटी पार्टियाँ सरकारें बना या बिगाड़ सकती हैं और इस तरह पूरे देश को प्रभावित कर सकती हैं। 4) एक संघीय बाजार अर्थव्यवस्था। आर्थिक उदारीकरण की विशेषता सार्वजनिक निवेश में गिरावट और निजी निवेश में वृद्धि, बाजार द्वारा संघीय योजना आयोग का विस्थापन और आर्थिक सुधार और विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले राज्यों के रूप में उभरना है। परिणाम ने भारत की संघीय व्यवस्था के परिवर्तन में योगदान दिया है। 5) नियामक के रूप में केंद्र सरकार। उपर्युक्त बातों से जो भी संकेत मिलता है, उसके बावजूद भारत की केंद्र सरकार लुप्त नहीं हो रही है। केंद्र कायम है, लेकिन इसकी भूमिका बदल गई है। केंद्र ने एक मध्यस्थ के रूप में काम किया था। अब यह एक नियामक के रूप में कार्य करता है। आर्थिक क्षेत्र में, यह कई राज्यों की पहलों की निगरानी करता है। यह राजकोषीय अनुशासन लागू करने का प्रयास करता है (हालांकि अधिकांशतः असफल)। राजनीतिक क्षेत्र में, केंद्र सर्वोच्च न्यायालय, राष्ट्रपति पद और चुनाव आयोग जैसी नियामक संस्थाओं के माध्यम से निष्पक्षता और जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए कार्य करता है।1989 में पहली गठबंधन सरकार के उदय के बाद से, "पुलिस" या ईमानदार दलाल के रूप में यह भूमिका बढ़ी है, जबकि हस्तक्षेप करने वाली संस्थाएँ, कैबिनेट और संसद, महत्व में कम हो गई हैं। 6) एक सामाजिक क्रांति। अधिकांश राज्यों में, और केंद्र में भी काफी हद तक, उच्च जातियों से निम्न जातियों की ओर सत्ता का शुद्ध प्रवाह हुआ है। भारतीय राजनीति ने एक सामाजिक-राजनीतिक क्रांति का अनुभव किया है, जिसका अर्थ है, वर्ण की दृष्टि से, ब्राह्मण (पुजारी, बुद्धिजीवी) से शूद्र (मेहनतकश) राज की ओर बढ़ना। 7) मध्यमार्गी राजनीति ने उग्रवाद के खिलाफ़ मोर्चा संभाला है। मध्यमार्गी राजनीति की अनिवार्यताओं ने हिंदू कट्टरवाद की गति को रोक दिया है। भारत का विविधतापूर्ण और बहुलतावादी समाज, गठबंधन राजनीति का उदय, और औसत मतदाता का समर्थन हासिल करने की आवश्यकता ने हिंदू-राष्ट्रवादी भाजपा को एक उग्रवादी से मध्यमार्गी पार्टी में बदल दिया है। 1) राज्यों का उदय। हाल के वर्षों में, भारत की संघीय व्यवस्था के 28 राज्यों ने भारत के सार्वजनिक जीवन में अधिक प्रमुख भूमिका निभाई है। भारत को शांतिपूर्वक रहने में मदद करने में उनका योगदान सबसे कम नहीं है। एक ऐसी दुनिया में जहाँ सशस्त्र संघर्ष ने गृह युद्ध और जातीय सफाए का रूप ले लिया है

परिचय

ये बात तो सबको मालूम है कि भारत के लोकतंत्र में एक बुनियादी परिवर्तन आ रहा है. ये बात कई बदलावों से ज़ाहिर होती है, जिसमें चुनावी मुक़ाबले के मिज़ाज में आया संस्थागत बदलाव, मध्यम वर्ग की तादाद में कई गुने का इज़ाफ़ा, सोशल मीडिया का बढ़ता दायरा और समाज के पुराने दर्ज़ों के पतन जैसी बातें शामिल हैं. 2014 के बाद से भारतीय जनता पार्टी के सामाजिक और भौगोलिक विस्तार ने देश के राजनीतिक परिदृश्य को भी बदल डाला है. इसका नतीजा ये हुआ है कि कांग्रेस और हाशिए पर चली गई है. वाम मोर्चा लगभग ख़त्म हो गया है और राज्य स्तरीय पार्टियों की ताक़त लगातार कम होती जा रही है. बीजेपी ने चारों

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 7.583 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 11, Issue 3, May-June 2024 |

दिशाओं में अपना व्यापक विस्तार किया है. इससे मतदाताओं के उन समूहों में बहुत हेर-फेर देखा जा रहा है, पहले जिनका इस्तेमाल सामाजिक दरारें बढ़ाकर अपने पाले में लाने के लिए किया जाता रहा था. इसी तरह, पिछले दो दशकों के दौरान राज्य स्तर की वो विशेषताएं जो पिछले दो दशकों में चुनावी विश्लेषण की राजनीतिक परिचर्चा पर हावी थीं, अब वो कुछ हद कमज़ोर हो गई हैं. ख़ास तौर से राष्ट्रीय राजनीति की दशा दिशा को समझने में उन बातों की अहमियत ख़त्म हो गई है.

बिना राजनीतिक दलों के आधुनिक लोकतंत्र की परिकल्पना करना नामुमकिन है क्योंकि वो तीन अहम क्षेत्रों में जनता और हुकूमत के बीच कड़ी की भूमिका निभाते हैं.[1,2,3]

आज जब भारत अपनी आज़ादी के 75 वर्ष पूरे होने का जश्न मना रहा है, तो हम तेज़ी से बदल रहे इस राजनीतिक परिदृश्य में, देश के लोकतंत्र को उसका वर्तमान स्वरूप देने में राजनीतिक दलों की भूमिका का मूल्यांकन कर रहे हैं. बिना राजनीतिक दलों के आधुनिक लोकतंत्र की परिकल्पना करना नामुमकिन है क्योंकि वो तीन अहम क्षेत्रों में जनता और हुकूमत के बीच कड़ी की भूमिका निभाते हैं. सियासी दल, व्यक्तिगत शिकायतों की मतदान के ज़रिए अभिव्यक्ति, राजनीतिक महत्वाकांक्षाएं बढ़ाने का ज़रिया और राजनीतिक समाधान के लिए तमाम वर्गों के हितों के मंच का काम करते हैं.

भारत में दलगत व्यवस्था का विकास

राजनीतिक दलों के अपने संगठनात्मक जीवन होते हैं. लेकिन वो स्थायी पार्टी व्यवस्था भी होते हैं. सियासी दल, व्यवस्था का 'अंग' होते हैं. ऐसे में ज़ाहिर है कि जब व्यवस्था में बदलाव होता है, तो उसका असर 'अंगों' पर भी पड़ता है. ये बात सब मानते हैं कि भारत में दलगत व्यवस्था ने अपने आग़ाज़ के साथ अब तक कम से कम चार परिवर्तन होते देखे हैं. पहली दलगत व्यवस्था (1952-1967) में कांग्रेस सबसे ताक़तवर पार्टी थी जो राष्ट्रीय स्तर के चुनाव के साथ-साथ ज़्यादातर राज्यों में भी जीता करती थी और अन्य दलों पर हावी रहती थी. इसी वजह से उस दौर को 'कांग्रेस व्यवस्था' के तौर पर शोहरत हासिल हुई. दूसरे दौर में, कई राज्यों में कांग्रेस के ख़िलाफ़ विपक्ष का उभार देखा गया, जिससे राज्य की दलगत व्यवस्था (1967-1989) में ध्रुवीकरण होता देखा गया. इस दौर में, वैसे तो कांग्रेस राष्ट्रीय स्तर के चुनाव जीतती रही. लेकिन, राज्यों में ग़ैर कांग्रेसी विपक्षी दल बड़े स्तर पर सीट और वोट जीतने लगे.

राजनीतिक दलों के अपने संगठनात्मक जीवन होते हैं. लेकिन वो स्थायी पार्टी व्यवस्था भी होते हैं. सियासी दल, व्यवस्था का 'अंग' होते हैं. ऐसे में ज़ाहिर है कि जब व्यवस्था में बदलाव होता है, तो उसका असर 'अंगों' पर भी पड़ता है.

तीसरे दौर में कांग्रेस के बाद की राजनीति का आग़ाज़ हुआ- एक प्रतिद्वंदी बहुदलीय व्यवस्था (1989-2014), जिसमें राष्ट्रीय स्तर पर भी कांग्रेस का दबदबा नहीं बचा. इस दौर में हमने केंद्र में गठबंधन सरकारें बनती देखीं, क्योंकि कोई एक दल अपने बूते बहुमत हासिल नहीं कर सका था. इस चरण में, राष्ट्रीय राजनीति हो या फिर राज्यों की सियासत, दोनों में राज्य स्तर के दलों की ताक़त और बढ़ गई. देश की मौजूदा दलगत व्यवस्था की शुरुआत 2014 में हुई जब भारतीय जनता पार्टी ने अपने दम पर बहुमत हासिल किया. बीजेपी के 2019 में दोबारा अपने दम पर बहुमत हासिल करने और अपनी पहुंच और बढ़ाने से भारत ने अब एक दल के दबदबे वाले दूसरे दौर में प्रवेश कर लिया है. आज भारतीय राजनीति का पलड़ा दक्षिणपंथ की तरफ़ इस क़दर झुक गया है कि सियासी रणनीति और दांव-पेंच के मामले में विपक्ष या तो ख़ामोश बैठा है या उसका कोई भी दांव काम नहीं आ रहा है.

भारत की दलगत व्यवस्था को गढ़ने वाले अहम पहलू[2,3,4]

वो कौन सी वैचारिक रूप-रेखा है जिसके आधार पर भारत में चुनाव लड़े जाते हैं? और किस तरह 'आइडियाज़ ऑफ़ इंडिया' ने देश के राजनीतिक दलों, दलगत व्यवस्था और लोकतंत्र को आकार दिया है? इस मामले में पांच बड़े प्रचलन देखे जा सकते हैं:

1. भारत की दलगत सियासत बड़े गहरे स्तर पर वैचारिक है और हुकूमत की सही भूमिका को लेकर मतभेदों ने आज़ादी के बाद से ही देश की दलगत व्यवस्था में बदलावों को प्रभावित किया है. सरकार को सामाजिक व्यवस्थाओं में दख़ल देना चाहिए या नहीं. उसे कमज़ोर तबक़ों से विशेष तरह का व्यवहार करना चाहिए या नहीं. इन जैसे कई मुद्दों को लेकर अलग अलग विचारों की ऐतिहासिक परंपराएं रही हैं. इन विचारों ने ही बीसवीं सदी के आधे हिस्से के दौरान देश की आज़ादी के आंदोलन की दशा दिशा पर अपना असर डाला था.
2. राजनीतिक दलों के वैचारिक स्तर पर चलाए गए आंदोलन ने कांग्रेस के प्रभुत्व वाले दौर को बहुदलीय मुक़ाबले में बदला और अब उसी वजह से बीजेपी का एकदलीय दबदबे वाला दौर आया है. इसके चलते न केवल राजनीतिक दलों के भीतर अधिक से अधिक वर्गों की नुमाइंदगी बढ़ी है, बल्कि संसद और राज्यों की विधानसभाओं में भी समाज के तमाम वर्गों का प्रतिनिधित्व बढ़ा है- यानी अधिक ग्रामीण और पिछड़ी जातियों के प्रतिनिधि शामिल हुए हैं. कुछ मामलों में भारत की राजनीति पहले की तुलना में आज अपने सामाजिक ढांचे का काफ़ी हद तक अक़्स बनती दिख रही है. ये विडंबना ही है कि इसी दौरान विधायी संस्थानों के नियमों और काम के तौर-तरीक़ों में भी गिरावट देखी गई है.
3. इस लंबे ऐतिहासिक संघर्ष में बीजेपी की मौजूदा जीत उसकी इस क्षमता की कामयाबी है कि वो देश के उन नागरिकों को अपने पाले में करने में कामयाब रही है, जो सामाजिक नियम कायदों में सरकार की दख़लंदाज़ी नहीं चाहते हैं; संपत्ति के

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 7.583 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 11, Issue 3, May-June 2024 |

वितरण से सरकार को दूर रखना चाहते हैं; धार्मिक अल्पसंख्यकों समेत सभी सामाजिक समूहों को ख़ास पहचान देना चाहते हैं. बीजेपी के समर्थकों में वो लोग भी शामिल हैं, जो लोकतंत्र का मतलब बहुसंख्यक वर्ग के मूल्यों को तवज्जो देना समझते हैं. भारत के स्वतंत्रता आंदोलन की अगुवाई करने और आज़ाद भारत के 75 वर्षों में से तीन चौथाई समय तक राज करने वाली कांग्रेस लगातार हाशिए पर चली जा रही है. कांग्रेस का सामाजिक समर्थक वर्ग और उसका वैचारिक दायरा लगातार सिमटता जा रहा है. इसलिए राजनीतिक मुक़ाबले का उभरता हुआ ढांचा ये संकेत दे रहा है कि आने वाले समय में राष्ट्रीय स्तर पर बीजेपी को किसी ख़ास विरोध का सामना नहीं करना पड़ेगा. हालांकि राज्य स्तर पर बीजेपी के सामने चुनौतियां खड़ी होती रहेंगी.

4. भारत ने देश में दलों के गठन के कम से कम पांच दौर देखे हैं: आज़ादी के पहले का दौर दलगत व्यवस्था के चार चरण वाले दौर. भारत में राजनीतिक दलों के गठन की प्रक्रिया आसान बनी हुई है और इसी वजह से देश की दलगत व्यवस्था में हर साल (अगर सैकड़ों नहीं तो) दर्जनों पार्टियां शामिल होती हैं. लेकिन इनमें से गिने चुने दल ही बमुश्किल दो चुनावी चक्रों से आगे का सफ़र तय कर पाते हैं. छोटे दल अक्सर अपना विलय बड़ी पार्टियों में कर देते हैं या गुम हो जाते हैं. मतदाताओं के स्तर पर बड़े पैमाने पर उथल-पुछल के बावुजूद राजनीतिक नाम आम तौर पर स्थिर होते हैं और पार्टी के ब्रैंड की अहमियत बनी हुई है. अपने बल-बूते पर निर्दलीय चुनाव जीत पाने वाले उम्मीदवारों की तादाद बहुत कम बनी रहती है. इसी तरह, बहुत से राजनीतिक दल एक दूसरे से काफ़ी मिलते चुलते हैं- फिर चाहे उनका संगठन का ढांचा हो, काम-काज का तरीक़ा, या फिर लोगों को एकजुट करने वाले नारे- ज़्यादातर दलों में आज फ़ैसले लेने की प्रक्रिया केंद्रीकृत हो गई है और चुनाव में उम्मीदवार का प्रचार पार्टी अपने विशाल संसाधनों या राजनीतिक विरासत के बल-बूते पर करती है. राजनीतिक दलों में आलाकमान वाली बढ़ती प्रवृत्ति के भारतीय लोकतंत्र में गंभीर परिणाम देखने को मिल रहे हैं. क्योंकि ऐसे राजनीतिक दल सामाजिक गिले-शिकवों को दूर कर पाने में नाकाम रह जाते हैं. इसका नतीजा ये होता है कि समाज के ये शिकवे सड़कों पर गैर दलीय गोलबंदी के रूप में नज़र आते हैं. इसी तरह भारत के सियासी दल, राजनीतिक गोलबंदी के माध्यम वाली अपनी भूमिका ठीक से निभा पाने में नाकाम रह रहे हैं. आज अलग अलग हित समूहों का व्यापक गठजोड़ बनने के बजाय, ज़्यादादर सियासी दल कुछ ख़ास वर्गों या समाज के सीमित स्तर के नुमाइंदे बनते जा रहे हैं. हालांकि, अपने भीतर इस गिरावट के बाद भी, ज़्यादातर सियासी दल, लोकतंत्र में अपनी कुछ अहम ज़िम्मेदारियां अच्छे से निभा रहे हैं.[3,4,5]
5. आख़िर में, विपक्ष के ख़ेमे में बिखराव और बीजेपी के दबदबे के चलते, आने वाले वर्षों में देश की सत्ता अधिक रूढ़िवादी और ग्रामीण सामंती वर्ग के हाथों में जा सकती है. सत्ता के इस हस्तांतरण से वैचारिक मतभेद और गहरे होने की आशंका है. इससे सामाजिक नियमों और उदारवादी मूल्यों पर होने वाली परिचर्चाएं आने वाले लंबे समय तक और अधिक विवादित बनी रहेंगी. वैसे तो लोकतंत्र के प्रक्रिया के बुनियादी पहलू जैसे कि समय पर चुनाव को तो अभी ख़तरा नहीं दिख रहा है. लेकिन लोकतंत्र के दूसरे व्यापक पहलुओं को निश्चित रूप से नुक़सान होगा, और इसी मामले में भारत के लोकतंत्र की नए सिरे से परिकल्पना करने में राजनीतिक दलों की भूमिका और भी अहम हो जाती है.

सियासी दल और लोकतंत्र की गहरी जड़ें

ऐसे में सवाल ये है कि हम अपनी सियासत के उभरते विरोधाभासों को कैसे समझें: एक मज़बूत प्रतिद्वंदी राजनीतिक व्यवस्था जहां राज्य स्तर के दल विधानसभा के अहम चुनाव जीतें और एक सक्रिय नागिरक समूह जो बीजेपी के वैचारिक दबदबे के बीच सड़कों पर उतरकर विरोध प्रदर्शन करे? और हम उस विरोधाभास की व्याख्या कैसे करें, जहां एक तरह ज़्यादातर सियासी दलों का एक संगठन के तौर पर पतन होता जा रहा है और उन पर आलाकमान वाली केंद्रीकृत व्यवस्था हावी होती जा रही है. वहीं दूसरी ओर, यही राजनीतिक दल हाशिए पर पड़े समूहों की नुमाइंदगी करने जैसे लोकतांत्रिक परिणाम देने की अहम भूमिका भी निभा रहे हैं.

इसमें कोई दो राय नहीं कि भारत का लोकतंत्र अपने आप में अनूठा है. ये संस्थागत ढांचे का एक नतीजा भी है और समाज में गहरी जड़ें जमाए बैठी विरोधाभासी ताक़तों के दबाव में अचानक पैदा हुआ परिणाम भी है. भारत के राजनीतिक दल इन सामाजिक ताक़तों के लिए एक मंच का काम करते हैं- हालांकि उनका रिकॉर्ड बहुत अच्छा नहीं रहा है. वो कुछ अपनी भूमिकाओं में तो सफल रहे हैं और कुछ में नाकाम भी रहे हैं. इन सियासी दलों का लचीलापन और फ़ुर्ती से ख़ुद को नए हालात के हिसाब से ढाल लेने की ख़ूबी रोज़मर्रा की राजनीति को ऊर्जावान बनाए रखती है. भारत में सियासत का रोज़मर्रा की बात होना और नेताओं की उद्यमिता वाली भावना किसी भी राजनीतिक संस्कृति का दबदबा स्थायी बनाने से रोकने का काम करेगी. इसके अलावा भारत की सभ्यता वाली विविधता का मतलब ये है कि कोई भी चुनावी बहुमत स्थायी नहीं है और न ही कोई वैचारिक दबदबा हमेशा क़ायम रहने वाला है. भारत के इस विविधता भरे ढांचे में लगातार होने वाले बदलावों से, एक दूसरे के विरोधाभासी नतीजे निकलते रहेंगे, और ये परिणाम ही हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था में संतुलन बनाए रखने का काम करेंगे.[4,5,6]

विचार-विमर्श

आधुनिक भारत में संसदीय और राष्ट्रपति आधारित लोकतंत्र राजनीतिक पंबुद्ध की उपस्थिति में ही काम कर सकते हैं। संविधान के अनुसार भारत का ढांचा अर्धसंघीय है और सरकार का प्रारूप संसदीय है। भारतीय समाज की विविधता भरी प्रकृति और इसके सामने आने वाली समस्याओं की पेचीदगी ने राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और स्थानीय स्तर पर कई विनाशों को जन्म दिया। आजादी

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 7.583 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 11, Issue 3, May-June 2024 |

के बाद पांच दशकों से अधिक समय तक अल्प विचारधारा वाली कई राजनीतिक विचारधाराएं सामने आईं। यदि हम भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को राष्ट्रीय आंदोलन में स्वाधीनता संग्राम के लिए प्रेरित करना चाहते हैं, तो हम मानते हैं कि इसमें विभिन्न हितों, जनसंख्या, जातियों और समुदायों का प्रतिनिधित्व था। लेकिन आजादी से पहले भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का एकमात्र उद्देश्य भारत की आजादी हासिल करना था। जैसे ही उनका उद्देश्य पूरा हुआ, कांग्रेस ने केंद्र और राज्यों में सरकार चलाने की चुनौती स्वीकार करने के लिए खुद को राजनीतिक पार्टी में बदल लिया।

भारत में अनेक सामाजिक और आर्थिक मुद्दों के बावजूद सरदार पटेल, राजेंद्र प्रसाद, पंडित जवाहरलाल नेहरू और श्रीमती इंदिरा गांधी जैसे कुछ करिश्माई नेताओं के कारण केंद्र में स्थिर नेताओं का लंबा दौर चल रहा था, जिसमें इन नेताओं को लाल बहादुर शास्त्री, कामराज, चव्हाण जैसे निःस्वार्थी कहा गया था। शीर्ष का भी सहारा मिला। अब ऐसे दयालु व्यक्तित्वों की गिनती के ही हैं, लेकिन "अक्षम" व्यक्ति खूब हैं, जिन्हें पेशेवर राजनेताओं का सहारा मिल रहा है।[5,6,7]

16 वर्ष तक चले जवाहरलाल नेहरू के कार्यकाल में केंद्र तथा कई राज्यों में कांग्रेस का एक छत्र राज्य था। भारत के कृतज्ञ व्यक्तित्व और देश-विदेश के लोगों को आकर्षित करने की उनकी चुंबकीय क्षमता ने भारत को राजनीतिक हलकों में ऐसी स्थिति में पहुंचा दिया, जिससे अन्य लोग ईर्ष्या करने लगे। मृतक का निधन जनता और कांग्रेस पार्टी के लिए झटका था। उस वक्त पैदा हुए शून्य को उनकी बेटी इंदिरा गांधी ने काफी हद तक भर दिया। लेकिन उनके कार्यकाल में ही कांग्रेस के पतन की प्रक्रिया शुरू हुई और अंत में उनकी पार्टी टूट गई। कांग्रेस पार्टी के पतन से एक पार्टी की प्रमुखता वाली प्रणाली खत्म हो गई और कुकुरमुत्तों की तरह राजनीतिक आपदाओं के उगने का दौर शुरू हो गया। भारतीय राजनीति में बहुदेववाद के विचारों तथा कार्यों को नए आयाम देने वाली बहुदेववादी व्यवस्था का उदय होने लगा है।
हमारे संविधान निर्माताओं ने कैबिनेट सरकार वाले संसदीय लोकतंत्र का ब्रिटिश मॉडल सोच-समझकर अपनाया था क्योंकि सामूहिक जिम्मेदारी के विचार के कारण वह भारत के लिए सबसे अनुकूल था। लोकतांत्रिक व्यवस्था में गठबंधन बहुदलीय व्यवस्था की अनिवार्यताओं का सीधा परिणाम है। यह बहुदलीय सरकार में अल्पमत वाली अनेक सुसंगत सरकारें चलाने के लिए हाथ मिलाती हैं, जो एकल व्यवस्था पर आधारित लोकतंत्र में संभव ही नहीं होता। गठबंधन की सरकार तब बनती है, जब सदन में कई राजनीतिक विचारधाराएं अपने मोटे मतभेदों को दूर-दूर तक साझा मंच पर हाथ मिलाने के लिए तैयार होती हैं और सदन में बहुमत बनाती हैं। दुर्भाग्य के बावजूद इसमें दुखद अंगेज तालमेल होता है।

गठबंधन के लिए अंग्रेजी शब्द 'कोलिशन' लैटिन से लिया गया है, जिसका अर्थ साथ चलना या बढ़ना होता है। इस व्याख्या के अनुसार 'कोलिशन' का अर्थ किसी एक निकाय या गठबंधन में बंधना या एकजुट होना होता है। इससे पता चलता है कि विभिन्न अंग या निकाय मिलकर कोई एक संस्था बना रहे हैं। राजनीतिक अर्थ में इसका उपयोग राजनीतिक सत्ता पर नियंत्रण हासिल करने के लिए विभिन्न राजनीतिक शक्तियों के बीच बने अस्थायी गठबंधन के लिए किया जाता है। इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंस में प्रोफेसर ओग कहते हैं कि 'गठबंधन ऐसी सहकारी व्यवस्था है, जिसमें अलग-अलग राजनीतिक सेवाएं या ऐसी इकाइयों के सभी सदस्य सरकार बनाने के लिए एकजुट हो जाते हैं।' [1] इस तरह का गठबंधन अभी तक पूरी तरह से अलग या दुश्मन की तरह रही दो या अधिक लड़ाइयों के बीच का गठजोड़ होता है, जिसे प्रशासन चलाने और राजनीतिक विभाग या पदभार संभालने के लिए बनाया जाता है।

संसदीय लोकतंत्र में गठबंधन आम तौर पर राजनीतिक संबद्धता का ही परिणाम होते हैं। ये सांप्रदायिक, सांप्रदायिक, धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक या राजनीतिक चुनौतियों का परिणाम हो सकते हैं। इन स्थितियों के कारण भी गठबंधन बन सकता है। गठबंधन सरकार की नीतियों में कई बातें शामिल हैं और गठबंधन का नेता उन्हें अंतिम रूप दे देता है। टकराव भरी गठबंधन की राजनीति में हेराफेरी करने वाली पार्टी दूसरी पार्टी का विरोध करती है और अधिक से अधिक षड्यंत्रकारी अपने कब्जे में लेने का प्रयास करती है।

1990 के दशक में राजनीतिक संघवाद और आर्थिक उदारीकरण के मामले में भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में जो परिवर्तन हुए, उनका महत्वपूर्ण पहलू 1989 से नई दिल्ली में मौजूद गठबंधन सरकारें और अल्पमत सरकारें भी हैं। 1989 तक कांग्रेस के लंबे वर्चस्व के बाद केंद्र में गठबंधन और अल्पमत की सरकार दिखीं। यद्यपि केन्द्र में गठबंधन सरकार 1989 में शुरू हुई थी और उसके बाद से ही जारी है, लेकिन केन्द्र में गठबंधन जनता पार्टी (1977-79) भी एक तरह से गठबंधन ही थी। 1989 से 1999 के दशक में कई अस्थिर गठबंधन और अल्पमत सरकारें दिखीं, जो एक के बाद एक आती रहीं। भारत में गठबंधन और अल्पमत सरकार संसदीय व्यवस्था की उस नाकामी का नतीजा है, जिसके तहत वह सरकार बनाने के लिए निचले सदन (लोकसभा) में पूर्ण बहुमत हासिल करने के पैमाने पर खरी नहीं उतरी है। 1989 के बाद से कोई भी पार्टी सदन में बहुमत हासिल नहीं कर पाई है। केवल 2014 में भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) 282 मौतें हासिल कर पाई। 2014 के चुनावों में भाजपा ने राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) ने 336 डाईस (जिनमें भाजपा के 282 डाईस शामिल थे) ऐतिहासिक जीत दर्ज की।

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 7.583 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 11, Issue 3, May-June 2024 |

भारतीय सामाजिक पहचान और उप-पहचान के आधार पर सामाजिक खोज की दिशा में आगे बढ़ रहा है और सामाजिक पहचान तथा विभिन्न सामाजिक समूहों के हितों का प्रतिनिधित्व करने के लिए राजनीति में भागीदारी के उद्देश्यों से कई सम्पत्तियां बनाई गई हैं। इसमें कोई शक नहीं कि समाज के पतन की यह प्रक्रिया राजनीतिक पतन के पतन और नई पतन के उदय की प्रक्रिया को भी तेजी से कर रही है। यह कारण ही नहीं था कि 1999 से 2004 तक भाजपा ने राजग में 24 गठबंधन और समूह बनाए थे तथा आंध्र प्रदेश की तेदेपा जैसी विशुद्ध क्षेत्रीय पार्टी को "बाहर से" उसका समर्थन कर रही थी। साथ ही, पैंथलिस पागल और पागलों की तरह ही सांस्कृतिक विविधताओं का भी हिस्सा था।

क्षेत्रीय राजनीतिक दल और गठबंधन की राजनीति ने राजनीति के अपराधीकरण को भी तेजी से किया है। क्षेत्रीय राजनीतिक भ्रष्टाचार की संख्या बढ़ने से आपराधिक रिकॉर्ड वाले लोगों के चुनिंदा राजनीतिक दलों में और उनके पेजमे प्रतिनिधि के प्रवेश की समस्या बहुत बढ़ गई है। गठबंधन की राजनीति ने राजनीतिक व्यवस्था की साख को दांव पर लगाकर उन्हें राष्ट्रीय स्तर पर पहचान दी है। आज कई ऐसे नेता हैं, जो क्षेत्रीय और राष्ट्रीय राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं, लेकिन उनके खिलाफ आपराधिक मुकदमे चल रहे हैं। क्षेत्रीय भ्रष्टाचार की मदद से गठबंधन की राजनीति ने समुदायिक रूप से भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में भ्रष्टाचार के खिलाफ काम किया है। [2] क्षेत्रीय राजनीतिक दल अपनी संकीर्ण सोच नहीं बदलते और इसीलिए उनकी दृष्टि भी संकीर्ण ही होती है। ये सभी लोकलुभावन पद्धतियों से समर्थन प्राप्त करती हैं। यह व्यवस्था सत्ता केंद्र से राज्यों में आती है। गठबंधन के सभी क्षेत्रीय दलों के मजबूत आधार होते हैं और उनके पास राष्ट्रीय आधार नहीं होता। नतीजा यह होता है कि राज्य मजबूत हो जाता है और केंद्र कमजोर हो जाता है। [3]

1967 से 1977 के दौर में एक पार्टी के प्रभुत्व से बहुदलीय राजनीति तक के सफर का गवाह बना। कई राज्यों में द्विदलीय व्यवस्था आ चुकी थी, यद्यपि हरेक राज्य में अलग-अलग दो प्रमुख होती थीं। इस परिवर्तन ने 1989 के चुनाव से पार्टी व्यवस्था में नए युग का सूत्रपात कर दिया। 20वीं सदी के अंतिम दशक में हुई राजनीतिक घटनाओं से स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय राजनीति में अब निम्न वर्ग का जोर है। क्षेत्र और राज्य आधारित भूकंपों के बढ़ते प्रभाव के साथ यह परिवर्तनशील राजनीति में हो रहे परिवर्तन को दर्शाता है। जनता के कुल वोटों में इन उपलब्धियों की संख्या 8-9 प्रतिशत तक हो चुकी है। आपदा की संख्या बढ़ने में दो कारणों का योगदान रहा है: पहला क्षेत्रवाद और क्षेत्रीय आपदा की बढ़ती ताकत; और दूसरी पुरातन विचारधारा के स्थान पर राजनीतिक सत्ता हासिल करने के लिए निरंतर बढ़ते प्रयास। 1999 में जनता दल के विघटन, 1999 के आम चुनाव से पहले महाराष्ट्र में राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी (राकांपा) का गठन और 1998 में उत्तर प्रदेश में कांग्रेस और बहुजन समाज पार्टी के विघटन का कारण यही था।[6,7,8]

प्रतिस्पर्धी राजनीति के बढ़ने से पार्टी प्रणाली बदल गई है और राष्ट्रीय आपदाओं के बीच की प्रतिद्वंद्विता अब क्षेत्रीय आपदाओं के बीच भी पहुंच गई है। नब्बे के दशक में एक के बाद एक अल्पमत की सरकार या गठबंधन सरकार आई। 1989, 1990, 1996, 1997, 1998, 1999 और 2004 से 2009 के बीच कई दुखद घटनाओं ने गठबंधन सरकारें बनाईं। 1989 से 1999 के बीच आठ सरकारें बनीं। कई छोटे-छोटे विवादों का प्रभाव बहुत बढ़ गया क्योंकि उनके पास जो शीर्षक थे, वे गठबंधन सरकार बनाने के लिए बहुत जरूरी थे। 1977 के बाद से 138 राज्यों में से 40 गठबंधन की स्थापना हुई और उनका औसत कार्यकाल 26 महीने से अधिक नहीं रहा। राष्ट्रीय स्तर पर 1977 के बाद से ही कई प्रमुख सरकारें बनाने के लिए आये हैं, लेकिन वे वास्तविक गठबंधन नहीं थे।

इंदिरा के समय में क्षेत्रीय मध्यम राष्ट्रीय राजनीतिक परिदृश्य का विकल्प उभर कर सामने आया। 1980 के दशक के अंत में कांग्रेस पार्टी की बर्बरता का गवाह बना। जिस कांग्रेस की शुरुआत में ज्यादातर देश पर दबदबा था, वह केवल तीन राज्यों - आंध्र प्रदेश, हिमाचल प्रदेश और केरल - में भरोसा जीत पाई। अन्य सभी राज्यों में कांग्रेस का समर्थन गंवा दिया गया और महाराष्ट्र, पंजाब, तमिलनाडु तथा उत्तर प्रदेश में उसकी स्थिति बहुत कमजोर हो गई। उनके समय में कांग्रेस का समुदाय भारतीय राजनीति पर प्रभाव था, लेकिन उनके बाद कांग्रेस ने हिंदी पट्टी में सबसे ज्यादा आधार गंवाया। कांग्रेस की कमजोरी का असली फायदा क्षेत्रीय पार्टियों ने उठाया।

कथित राजनीतिक तस्वीर के बीच एक पार्टी के प्रभुत्व वाली बहुलवादी व्यवस्था के बजाय राजनीतिक बहुलवाद कायम हो गया। विविधता भरी भारतीय जनता को देखते हुए यह प्रवृत्ति भी थी। क्षेत्रीय, भाषाई और सांस्कृतिक स्तर पर आकांक्षाएं जागीं, कई प्रकार की राजनीतिक और सामाजिक विविधता सामने आई, जो नस्लीय, जातीय, धार्मिक और ऐसे ही अन्य पहलुओं को स्वर दिया। क्षेत्रीय चेतना ने कई नई प्रौद्योगिकी प्रदाताओं को बढ़ावा दिया। [4] क्षेत्रीय चेतना हरेक राज्य में अलग-अलग थी और गठबंधन व्यवस्था ही इकलौती व्यवस्था थी, जिसमें क्षेत्रीय राजनीतिक विरोधियों को आराम से जगह मिल सकती थी।

सत्ता साझा करने और राजनीतिक समझौते के लिए राजनीतिक गठबंधन की बाध्यता थी और उसे जनता की राजनीतिक चेतना और निर्णय लेने की परंपरा के नए स्तर के रूप में देखा जाना चाहिए। गठबंधनों को राजनीतिक क्रांति का कारक बनने के बजाय एक ही पार्टी के दबदबे के खिलाफ जनता के असंतोष और उसके कारण पछतावे, रोष और अतिवाद का संकेत देना

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 7.583 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 11, Issue 3, May-June 2024 |

चाहिए। यदि विपक्षी दल सख्त रुख और समान शक्तियों को खारिज कर राजनीतिक सामंजस्य और राजनीतिक विनाश की साझी सत्ता को तरजीह देते हैं तो यह उनकी उत्पादकता की निशानी है। [5] दो या अधिक राजनीतिक असफलताओं से बनी गठबंधन सरकार विफलता को पूरा करने की निशानी हैं। गठबंधन काल से निकले भारतीय राजनीतिक हितों को पूरा करने के लिए इतने विकास या प्रतिबद्धता की आवश्यकता नहीं है। कई राज्य संबंधी प्रस्ताव नए हैं और बचना व्यवहार करती हैं। लोकतंत्र की परवाह, समझदारी, सलाह-मशविरे और समझौते की भावना उनके भीतर नहीं कटती है।

गठबंधन 1989 से ही चल रहा है, जो स्वाभाविक भी है क्योंकि 2014 के आम चुनाव में भाजपा के बहुमत को छोड़ दें तो कोई भी पार्टी कांग्रेस में अपने दम पर बहुमत नहीं ला सकती है। गठबंधन के दौर में "बाहर से समर्थन" की राजनीति ने प्रधानमंत्री के पद को "लोटरी" जैसा बना दिया और इसके कारण केंद्र में प्रशासन बहुत कमजोर हो गया। क्षेत्रीय अकाल ने 1989 से ही कांग्रेस और भाजपा जैसी दो अकालों में से किसी एक के साथ आकर या दोनों राष्ट्रीय अकालों को कांग्रेस में जीतकर, गणितज्ञों के अनुसार राष्ट्रीय राजनीति में बहुत अहम भूमिका निभाई।[7,8,9]

परिणाम

स्वतंत्रता के तुरंत बाद, भारत सरकार का मुख्य जोर भारत की आबादी की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने पर केंद्रित था, जिसमें भोजन, कपड़ा और आश्रय शामिल हैं। इस दृष्टिकोण से, राष्ट्रीय नीति निर्माताओं ने ग्रामीण गरीबों को कम करने के लिए विभिन्न उपायों पर विचार किया। पंचायती राज प्रणाली के माध्यम से लोगों को सशक्त बनाकर स्वशासन और योजना बनाने की प्रक्रिया लगभग पाँच दशक पहले शुरू हुई थी, लेकिन भारत के संविधान में 73वें और 74वें संशोधन ने जमीनी स्तर पर विकेंद्रीकरण की प्रक्रिया में ऐतिहासिक बदलाव लाया और योजनाओं के निर्माण और कार्यान्वयन दोनों में लोगों की भागीदारी की। यह शोधपत्र बताता है कि संविधान के 73वें संशोधन अधिनियम (1992) ने विकेंद्रीकरण के माध्यम से कमजोर वर्गों के कल्याण के लिए पीआरआई को कैसे निश्चितता, निरंतरता और ताकत प्रदान की। गाँव, ब्लॉक और जिला स्तर का एक समान त्रिस्तरीय स्तर, सभी सीटों और सभी स्तरों पर प्रत्यक्ष चुनाव, मध्यवर्ती और शीर्ष स्तर पर अध्यक्षों के लिए अप्रत्यक्ष चुनाव। पीआरआई की सदस्यता और अध्यक्ष दोनों के लिए, उनकी आबादी के अनुपात में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए रोटेशन के आधार पर आरक्षण। महिलाओं के लिए आरक्षित सीटों और पदों का एक तिहाई से कम नहीं। वर्तमान शोधपत्र का उद्देश्य सामान्य रूप से कर्नाटक में पंचायत राज संस्थाओं में कमजोर वर्गों की राजनीतिक भागीदारी और विशेष रूप से गुलबर्गा जिले के अफजलपुर तालुक में केस स्टडी के रूप में चर्चा करना है। अंत में शोधपत्र में कमजोर वर्गों की राजनीतिक भागीदारी के बारे में चर्चा की गई है और संविधान की ग्यारहवीं और बारहवीं अनुसूची की सूची को ग्रामीण और शहरी निर्वाचित स्थानीय निकायों को हस्तांतरित करने के साथ राजनीतिक, आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय की प्रक्रिया में उनकी भागीदारी के बारे में उनकी राय मांगी गई है, और पंचायत राज संस्थाओं के माध्यम से कमजोर वर्गों के लिए कल्याणकारी गतिविधियों की प्रक्रिया पर चर्चा की गई है।

कोविड-19 और रूस-यूक्रेन संघर्ष के कारण हाल ही में हुए भू-राजनीतिक परिवर्तनों में भारत की विदेश नीति की गतिशीलता स्पष्ट है। चूंकि भारत बहुध्रुवीय दुनिया की बढ़ती वास्तविकता का स्वागत करता है, इसलिए इसकी आत्मविश्वासपूर्ण विदेश नीति केवल संतुलनकारी शक्ति बनने के बजाय एक अग्रणी शक्ति बनने की आकांक्षा रखती है। आत्मनिर्भरता पर ध्यान केंद्रित करते हुए, यह वैश्विक जिम्मेदारियों को निभाने के लिए तैयार है। यह न केवल हाल ही में कोविड-19 के दौरान वैक्सीन मैत्री के साथ दुनिया के लगभग 100 देशों के साथ मानवीय सहायता और आपदा राहत कार्यों में प्रदर्शित हुआ, बल्कि अफ़गानिस्तान को खाद्यान्न सहायता में भी प्रदर्शित हुआ। महत्वपूर्ण वैश्विक वार्ताओं में भारत की सक्रिय भागीदारी के साथ-साथ शांति स्थापना में भारत की भूमिका और समुद्री क्षेत्रों को सुरक्षित रखने की प्रतिबद्धता अच्छी तरह से स्थापित है।[8]

निष्कर्ष

इसलिए, यह समय पर आयोजित 3-दिवसीय पाठ्यक्रम प्रतिभागियों को भारतीय विदेश नीति के प्रक्षेपवक्र, भू-राजनीतिक जटिलताओं और वैश्विक परिणामों को अनुकूलित करने और यहां तक कि उन्हें आकार देने की इसकी गतिशीलता के बारे में जानकारी प्रदान करेगा। यह पाठ्यक्रम विभिन्न विशेषज्ञ संसाधन व्यक्तियों द्वारा संचालित किया जाएगा, जिनमें प्रख्यात शिक्षाविद्, वरिष्ठ शोधकर्ता, पूर्व भारतीय राजनयिक और पत्रकार शामिल होंगे, जो भारत की विदेश नीति के गहन पर्यवेक्षक और विश्लेषक हैं।[9]

संदर्भ

1.डी देवनाथन, स्ट्रेंथनिंग कोअलिशन एक्सपेरिमेंट ऑफ सेंटर: ए फ्यू सजेशन्स, थर्ड कॉन्सेप्ट, खंड 12, क्रमांक 143, जनवरी, 1999, पृष्ठ - 26
2. ई सुधाकर, कोअलिशन ईरा इन इंडियन डेमोक्रेसी, थर्ड कॉन्सेप्ट, खंड - 18, क्रमांक 212, अक्टूबर, 2004, पृष्ठ - 11-12

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 7.583 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 11, Issue 3, May-June 2024 |

3. पार्वती एए, इमर्जेंसी ऑफ कोअलिशन सिस्टम इन इंडिया: प्रॉब्लम्स एंड प्रॉस्पेक्ट्स, थर्ड कॉन्सेप्ट, खंड 19, क्रमांक 217, मार्च, 2005, पृष्ठ - 9
4. विद्या स्टोक्स, कोअलिशन गवर्नमेंट फॉल्ट लाइन्स इन इंडियन पॉलिटी, अजय भंडारी द्वारा संपादित संघ सरकार विषय, विधान सभा सचिवालय, जनवरी - जून, 2000, पृष्ठ - 10
5. अख्तर मजीद, कोअलिशन पॉलिटिक्स एंड पावर शेयरिंग, मानक पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2000, पृष्ठ – 2

6.ए अज़ीज़, लोकतांत्रिक, विकेंद्रीकरण - कर्नाटक का अनुभव पोस्ट किया गया: 2000

7.एस ए भंडारे, हुपारी ग्राम पंचायत का वित्त पोस्ट किया गया: 2007

8.भोला नाथ , घोष, त्रिपुरा में शासन में महिलाएं' कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कंपनी पोस्ट किया गया: 2008

9.एन बुच , यू जैन , एसएन चौधरी,मध्य प्रदेश में पंचायती राज में महिलाएँ पोस्ट किया गया: 1999

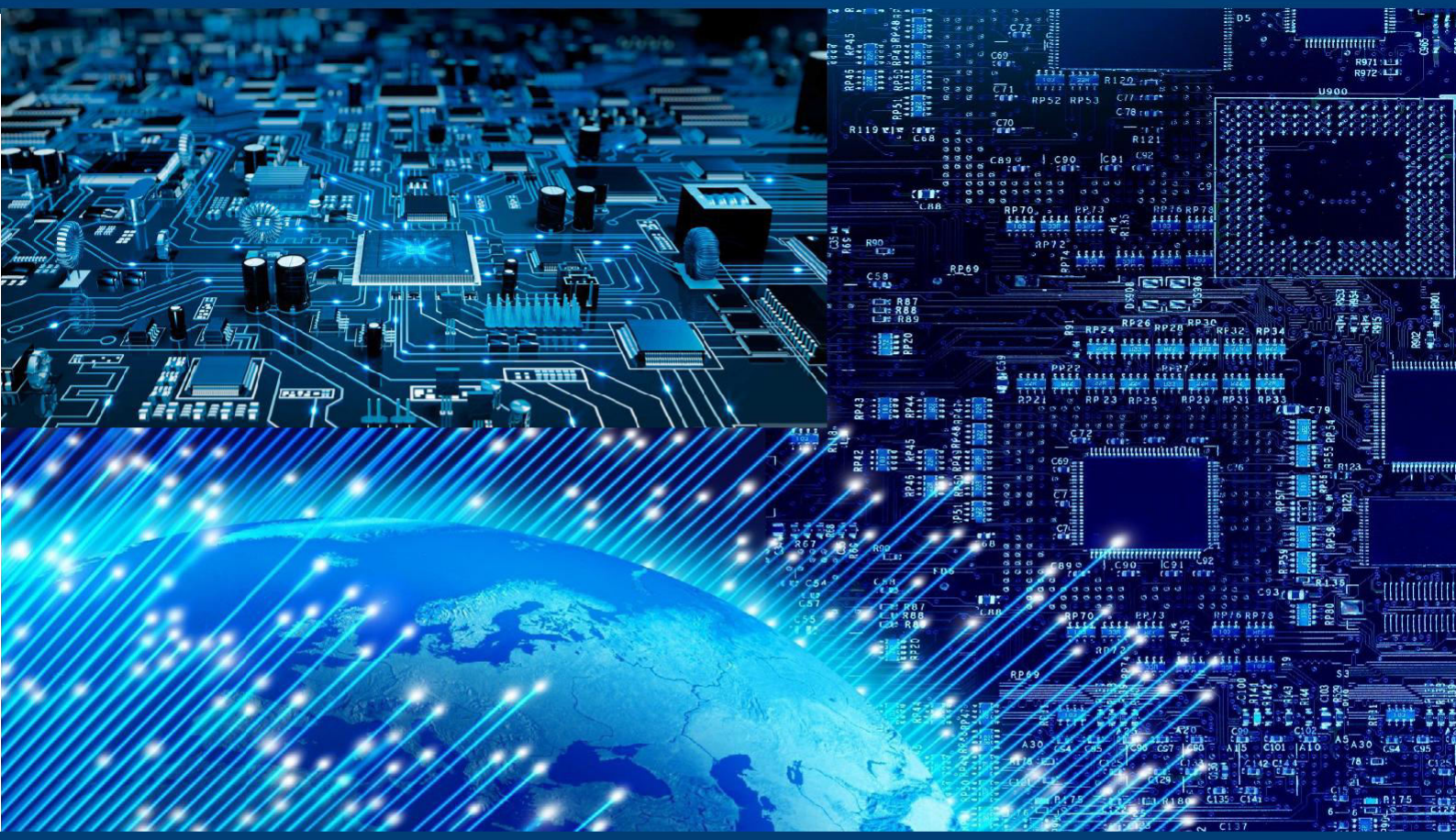

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| Mobile No: +91-9940572462 | Whatsapp: +91-9940572462 | ijarasem@gmail.com |